स्वराज ज्ञान वार्ता पर कुछ विचार

चित्रा सहस्रबुद्धे

1. लोकविद्या वार्ता समूह के बीच पिछले कुछ दिनों से **'स्वराज एक प्राकृतिक नियम है'** इस विषय है पर चर्चा चल रही है और गिरीश, गाँधी, कृष्णराजुलू, जी. एस. कृष्णन और सुरेश ने अपने लिखित विचार प्रस्तुत किये हैं और उन पर जारी यह चर्चा नई संभावनाओं को खोल रही हैं. इस चर्चा में कुछ जोड़ने की मेरी कोशिश है.

2. मैं अपनी बात लोकविद्या आन्दोलन के मूलतापी अधिवेशन (2014) के निर्णयों का सन्दर्भ लेकर कर रही हूँ, उसका पहला ही निर्णय था कि 'हर मनुष्य ज्ञानी है और उसे अपने ज्ञान के बल पर जीवनयापन करने का अधिकार हो. यह उसका जन्मसिद्ध अधिकार है'. यह वाक्य कुछ मिलता-जुलता है आज़ादी के आन्दोलन में लोकमान्य तिलक द्वारा किये गए आवाहन का 'स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है.' ये दोनों ही वाक्य आधुनिक राजनीतिक सत्ता और उसकी व्यवस्था को चुनौती देते हैं. ऐसे वाक्य किन परिस्थितयों में जन्म लेते हैं और इनका आधार कहाँ होता है? ऋषियों के श्लोक, सुक्त, बुद्ध के सूत्र, कबीर के दोहे और अन्य अनेक संतों के परिवर्तनकारी दर्शन का सार ऐसे ही व्यक्त होता रहा है. ये वाक्य मनुष्य को अपनी चेतना को जागृत करने, अपनी स्वायत्तता को पहचानने और अपनी सक्रियता के खुद स्वामी बन जाने का रास्ता खोलते रहे हैं.

3. समस्याओं का पूरा हल बनाकर प्रस्तुत करना यह दर्शन का काम नहीं है, बल्कि मनुष्य को हल खोजने की दिशा, चौखट, बाधा और बुनियाद के प्रति जागृत और सक्रीय करता है. जब अपने ज्ञान (विरासत, वर्तमान ज़रूरत, परिवेश की समझ आदि) के बल पर हर मनुष्य और समाज इन वाक्यों के इर्द-गिर्द सोच को बुनने लग जाते हैं तो दर्शन आकार लेने लगते हैं. लोकविद्या आन्दोलन इसी क्रिया को आकार देने का प्रयास है.

4. 'स्वराज' पर चल रही इस बात, चर्चा, लेखन, कार्यक्रम आदि का उद्देश्य निश्चित ही वर्तमान मनुष्य और प्रकृति विरोधी व्यवस्थाओं में परिवर्तन लाने के लिए हैं और इस परिवर्तन का एक सन्दर्भ भी है. दुनिया के शासक वर्ग 'सामान्य (प्राकृतिक)जीवन को ख़त्म करने और मनुष्यता के बिना दुनिया' की कल्पना को आकार देने की कोशिश में लगे जान पड़ते हैं. सामान्य मनुष्य के पास से अपने जीवन के फैसले, सोच, और कार्य के अधिकार छिनते चले जा रहे हैं. अति विध्वंसकारी युद्ध, लोक विरुद्ध राजनीतिक निर्णय, लुटेरी आर्थिक व्यवस्थाएं, खुले आम वैरभाव, लालच, वध को प्रोत्साहन, कोरोना जैसे कृत्रिम संकटों का थोपा जाना, आदि इतना प्रखर होता जा रहा है कि सामान्य मनुष्य को इन्हें चुनौती देना लगभग असंभव सा लगने लगा है. सामान्य मनुष्य की इस असहायता को तोड़ने, उसे खुद की स्वायत्त शक्ति को पहचानने और अपनी सक्रियता को यानि मनुष्यता को पुन: हासिल करने का रास्ता ही स्वराज ज्ञान वार्ता है. इस तरह स्वराज ज्ञान वार्ता परिवर्तन के दर्शन को आकार देने की क्रिया है.

5. हर समाज अपनी सांस्कृतिक विरासत और जीवंत परिस्थितियों के चलते प्रकृति के क्रियाकलापों और उसके तर्क, मूल्य, उद्देश्य की अपनी समझ बनाता रहा है और इस समझ के आधार पर हर युग में दर्शन और जीवन के नवीनीकरण का सामर्थ्य हासिल करता रहा हैं. इस नवीनीकरण की क्रिया का एक ठोस और महत्वपूर्ण सन्दर्भ प्रकृति के साथ रिश्ते से तय होता रहा है. विविध समाजों ने प्रकृति के अनेक रूप देखे हैं. जिन समाजों ने इसके रौद्र रूप में जीवन बिताया वे इस

पर विजय प्राप्त करने का दर्शन गढ़ते हैं और जिन्होंने इसके सौम्य और पालनकारी रूप को देखा है वे सहजीवन के दर्शन को गढ़ते रहे हैं. इन दो छोरों के बीच विविध दर्शनों ने आकार लिया है. एक सही और दूसरा गलत है, यह नहीं कहा जा रहा है बल्कि दोनों के साथ इस दुनिया और जीवन को देखने-समझने का आग्रह स्वराज के विचार में रहा है. (शिव की नैतिक सत्ता का विचार कुछ ऐसा ही है). इस तरह का विचार हमारे ही नहीं बल्कि अनेक समाजों में रहा है. हमारे देश के समाजों में हम आज भी अनेक रूपों में इसे जीवंत देखते हैं यह विशेष बात है.

6. धरती, सृष्टि, या प्रकृति को दुनिया के अधिकतर (शायद बहुसंख्य) समाजों ने माँ के रूप में देखा है और इसके प्रति मनुष्य की जिम्मेदारियों को नैतिक कर्म/कर्तव्य का दर्जा दिया है. प्रकृति में जो भी जड़ और जीव हैं उन्हें मनुष्य के सहोदर की मान्यता मिली; विविध अनुपात और परिस्थितियों में ये एक दूसरे से सहयोग कर नई निर्मिती करते हैं और प्रकृति को समृद्ध करते रहते हैं. प्रकृति में विविधता की बहुलता का आधार इन समाजों ने सहयोग और सहजीवन में देखा. ऐसा सहजीवन; जिसमें सबकी अपनी स्वायत्त पहचान बने और सबके लिए सक्रियता के रास्ते खुले. ये स्वराज के प्राण हैं. ऐसी व्यवस्था में ही न्याय, त्याग और भाईचारा के मूल्य प्रकट रूप में खिलते और समृद्ध होते हैं. **प्रकृति की इसी मूल्य व्यवस्था को स्वराज का प्राकृतिक नियम कहा जा सकता है.** मनुष्य समाजों के लिए भी आज यही परिवर्तनकारी मूल्य हैं.

7. पाश्चात्य दार्शनिकों ने सभ्यताओं के विकास को समझने में मनुष्य की आवश्यकताओं को एक महत्वपूर्ण आधार बनाया. हमारे देश के दार्शनिकों के अनुसार भारत भूमि के समाजों में प्रगति और विकास का आधार मनुष्य/समाज की उन क्रियाओं में देखा जो प्रकृति के साथ सहजीवन के रिश्ते को मज़बूत करें, विकसित करें. मनुष्य के कर्म, कर्तव्य और जिम्मेदारियों को इसी प्रकाश में देखा गया और इसे जीवनयापन और जीवन संगठन का नैतिक मार्ग, मनुष्यता का मार्ग माना गया. प्रकृति के कार्यों में आ रही गड़बड़ियों और बाधाओं को दूर करने में मनुष्य की भूमिका देखी गई. पूरे ब्रह्माण्ड के हर जड़-चेतन पिंड की गति और भूमिका को नैतिक शक्तियों से संचालित देखा, जिसमें हर पिंड अपना स्वायत अस्तित्व रखता है, अन्य पिंडों से सहयोग कर नया बनाने में खुद को विसर्जित करता है. इन या ऐसे विचारों के चलते सत्य, परपीड़ा का एहसास और अहिंसा को मनुष्य गतिविधियों के विविध क्षेत्रों में प्रबंधन और नियमन का आधार बनाया. इनके बल पर अलग-अलग युग में यहाँ के समाज स्वराज की बुनियादी व्यवस्थाओं के रूपों को देखने और बनाने की शक्ति हासिल करते रहे हैं.

8. लोकविद्या ने बहुजन समाज की दर्शन और सांस्कृतिक विरासत की ऐसी ही शक्ति से परिचय प्राप्त करने का एक मार्ग अवश्य खोला है. इसके बल पर हम मनुष्य, मनुष्यता और प्रकृति के आपसी संबंधों को आज की ज़रूरतों के सन्दर्भ में बहुत कुछ देखने में समर्थ हो सकते हैं. बहुजन समाज के सामाजिक, आर्थिक, दार्शनिक, धार्मिक आदि विविध क्षेत्रों में स्वराज के ये मूल्य और रूप विद्यमान हैं, जिसे लोकविद्या आन्दोलन के विभिन्न साहित्य में प्रकाशित भी किया है. इसे प्रयासपूर्वक गहरा, समकालीन और व्यापक सोच का आधार बनाया जाना चाहिए.

9. हम सभी जानते हैं कि आज़ादी के आन्दोलन के दौरान स्वराज पर गहन चिंतन हुआ है. स्वराज की व्यवस्था को 'स्व' से लेकर 'ब्रह्माण्ड' तक में फैला देखने की कोशिश हुई है, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में तो प्रकट रूप में अवतरित करने के प्रयास हुए हैं. कला, संस्कृति और दर्शन के क्षेत्रों में इस पर विस्तृत लेखन और चिंतन हैं. आनंद कुमारस्वामी, नीहार रंजन राय, के.सी. भट्टाचार्य, विनोबा, रवीन्द्रनाथ आदि का लेखन इस चिंतन की समृद्धता को सामने रखता

है. यह सच है कि आज़ादी के बाद स्वराज के विचार को शासकों ने त्याग दिया, लेकिन यह भी सच है कि यहाँ के समाजों ने इसे नहीं त्यागा है और पिछले दशक तक हो रहे परिवर्तन के संघर्षों में और हाल ही के किसान आन्दोलन में भी स्वराज के विचार की गूंज बनी रही है.

10. अंत में लोकविद्या समूह द्वारा स्वराज पर शुरू हुई यह बहस एक स्वराज ज्ञान पंचायत का रूप लें इसका प्रयत्न होना चाहिए और इसमें के.सी. भट्टाचार्य, द्वारा 1928 में अंग्रेजी में लिखा हुआ परचा 'स्वराज इन आइडियाज' को भी एक आधार बनाया जाना चाहिए. नीचे इस लेख के कुछ अंश जोड़ रही हूँ.

Swaraj In Ideas K.C. Bhattachary 1928 :

- In the sphere of ideas, there is hardly yet any realization that we can think effectively only when we think in terms of the indigenous ideas that pulsate in the life and mind of the masses. We condemn the caste system of our country, but we ignore the fact that we who have received Western education constitute a caste more exclusive and intolerant than any of the traditional castes. Let us resolutely break down the barriers of the new caste, let us come back to the cultural stratum of the real Indian people and evolve a culture along with them suited to the times and to our native genius. That would be to achieve Swarai in Ideas.

- Cultural subjection is ordinarily of an unconscious character and it implies slavery from the very start.

- We have to distinguish, however, between two forms of rationalism, two directions of this simplifying movement. In the one, reason is born after the travail of the spirit: rationalism is here the efflux of reverence, reverence for the traditional institutions through which customary sentiments are deepened into transparent ideals. In the other form of rationalism—what is commonly meant by the name, the simplification and generalization of ideals is effected by unregenerate understanding with its mechanical separation of the essential from the inessential. The essential is judged as such here not through reverence, not through deepened spiritual insight, but through the accidental likes and dislikes of the person judging. Customs and institutions bound up with age-long sentiments are brushed aside (in the name of reason) as meaningless and dead without any imaginative effort to realize them in an attitude of humility. Decisions as to what is essential or inessential have indeed to be taken, for time tarries not and mere historical sentimentalism will not avail. In practical

life, one may have to move before ideals have clarified ; but it is well to recognize the need of humility and patience in the adjustment of the world of ideas. Order is involved in the world of our ideas through infinite patience and humility. That is the right kind of rationalism : it is only in the wrong and graceless form of rationalism that brusque decisions in the practical manner are taken in the name of reason, in the world of our ideals.

- It is sometimes forgotten by the advocates of universalism that the so-called universalism of reason or of religion is only in the making and cannot be appealed to as an actually established code of universal principles. What is universal is only the spirit, the loyalty to our own ideals and the openness to other ideals, the determination not to reject them if they are found within our ideals and not to accept them till they are so found. The only way to appraise a new ideal is to view it through our actual ideal; the only way to find a new reverence is to deepen our old reverence. Progress in the spiritual world is not achieved by a detached reason judging between an old god and a new god. The way to know facts is not the way to know values.
- So much for the objection, which is often raised in the name of universalism, to the stress I have laid on the individuality of Indian thought and spirit, on the conservatism of the distinctive values evolved through ages of continuous historical life of Indian society. I have thought it necessary to examine universalism in some detail at the risk of tiring the reader with abstract arguments because this appears to me to be our greatest danger. It is the inevitable result of our 'rootless' education and it stands more than anything else in the way of what I call **Swaraj in Ideas.**